वित्तीय वैश्वीकरण, संवृद्धि और स्थिरता: भारतीय परिप्रेक्ष्य*

या.वे.रेड्डी

वित्तीय क्षेत्र के सुधार

भारत में, वित्तीय क्षेत्र की क्षमता और सुदृढ़ता में सुधार लाने के प्रयास 1991 में शुरू हुए सुधारचक्र के प्रारंभ में ही शुरू हो गए थे जो एक प्रकार से उत्पाद और कारक बाजारों में परिणामी लचीलेपन से लाभ प्राप्ति की अपेक्षा में थे । किंतु, विवेकपूर्ण ढांचे, परिचालनात्मक क्षमता और विनियामक / पर्यवेक्षी व्यवस्था के संदर्भ में वित्तीय संस्थाओं के कार्यों के सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया क्रमिक रही है । यह मुद्रा, विदेशी मुद्रा, सरकारी प्रतिभूतियों और ईक्विटी बाजार के विकास से भी जुड़ी हुई थी । उसी समय, इस बात को देखते हुए कि विशेष रूप से भारत में बैंकिंग क्षेत्र में सार्वजनिक क्षेत्र मुख्य है, बैंकिंग, वित्तीय और बाह्य क्षेत्र में सुधार की गति और विषयवस्तु कुल मिलाकर सार्वजनिक क्षेत्र और वास्तविक तथा राजकोषीय क्षेत्र में हुई प्रगति जैसी ही रही है । वित्तीय क्षेत्र को वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं के अनुरूप बनाने के हमारे प्रयासों में संबंधित क्षेत्रों, विशेष रूप से वास्तविक क्षेत्र के लचीलेपन,राजकोषीय स्थिति और समग्र संचालन मानकों में समरूपी अनुकूलन संबंधी सार्वजनिक नीति में प्राप्त प्रगति को ध्यान में लिया जाता है ।

भारतीय संदर्भ में, वर्तमान में भारतीय रिज़र्व बैंक संवृद्धि और स्थिरता के अपने दोहरे लक्ष्य को देखते हुए मूल्य और वित्तीय स्थिरता को बहुत महत्व देता है । अधिकांश गरीबों को उच्च संवृद्धि का लाभ मिलने में काफी समय लगता है जबकि मूल्य वृद्धि का उन पर तुरंत प्रभाव पड़ता है । इसके अलावा, हम जानते हैं कि सामाजिक सुरक्षा प्रक्रिया और सार्वजनिक सुरक्षा नेट के

*वैश्वीकरण, मुद्रास्फीति और मौद्रिक नीति पर पेरिस में 7 मार्च 2008 को आयोजित बैंक डी फ्रांस की अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डा. या.वे. रेड्डी की टिप्पणी ।

अभाव में वित्तीय क्षेत्र की गतिविधियों के कारण वास्तविक क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली जोखिम को सहने की गरीबों की क्षमता सीमित होती है ।

मैं वित्तीय संस्थाओं और वित्तीय बाजारों संबंधी स्थिरता पर बल देने के दो उदाहरणों से स्थिति स्पष्ट करना चाहता हूँ । पहला, विविधीकृत सर्वव्यापी बैंकिंग की प्रथा क्रमिक रूप से बढ़ाते हुए बैंकिंग क्षेत्र की केंद्रीयता, विशेष रूप से खुदरा जमा आधार और ऋण वितरण को बनाए रखा जाता है । दूसरा, वित्तीय बाजारों के संदर्भ में, निरंतर यद्यपि मध्यम स्वरूपीय, जीडीपी के प्रति उच्च मिश्रित (अर्थात् संघीय तथा प्रांतीय दोनों ऋण एक साथ) सार्वजनिक ऋण का 70 प्रतिशत से अधिक का अनुपात, जिसके साथ राजकोषीय घाटे के चालू स्तर भी हैं, लगभग पूरा सरकारी ऋण, मुख्यतः निर्धारित ब्याज दरों पर, देशी मुद्रा में मूल्यवर्गित होता है और लगभग पूरी तरह निवासियों के पास होता है । इसका एक छोटा हिस्सा विदेशी संस्थागत निवेशकों और बहुपक्षीय / द्विपक्षीय एजेंसियों के लिए खुला होता है । उसी समय, सरकारी प्रतिभूति बाजार सुविकसित हो गया है और बढ़ रहे कंपनी बांड बाजार के स्वस्थ विकास का मार्ग बना रहा है।

पूंजी खाते का उदारीकरण

पूंजी खाते का उदारीकरण एक क्रमिक प्रक्रिया रही है जिसमें पूंजी प्रवाहों के लिए वरीयताओं के क्रम की पहचान के साथ घरेलू, कंपनियों और वित्तीय मध्यस्थों के बीच अंतर रखा जाता है । ऋण बाजारों की तुलना में ईक्विटी बाजार अधिक उदारीकृत होते हैं । अनुभवों ने यह दिखा दिया है कि ईक्विटी में निवेश, विशेष रूप से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के संबंध में, प्रौद्योगिकीय और संगठनात्मक ज्ञान जैसे आनुषंगिक लाभ ला सकते हैं । अतः, बाह्य ऋण के सक्रिय प्रबंधन के साथ ईक्विटी के संदर्भ में पर्याप्त खुलापन है ।

नीति में व्यापार के उदारीकरण के लाभों को तुरंत पहचाना जाता है, वहीं उसमें पूंजीखाते के प्रबंधन संबंधी देशी गतिविधियों और वैश्विक स्थिति दोनों के आधार पर जोखिमों और प्रतिलाभों को लगातार तौला जाता है। इस प्रकार, पूंजी खातों के उदारीकरण की प्रक्रिया में देशी वित्तीय क्षेत्र की गतिविधियों, राजकोषीय स्थिति और वास्तविक क्षेत्र के लचीलेपन की समवर्ती गति देखी जाती है ।

पूंजी खाता प्रबंधन

यह तर्क करना संभव है कि जैसे स्थिरीकरण निधि चालू खाते के आघातों का ध्यान रखती है, वैसे ही पूंजी खाता प्रबंधन और बाजार हस्तक्षेपों द्वारा संज्ञेय पूंजी खाता आघातों का ध्यान रखना न्यायसंगत है ।

वित्तीय बाजार के विकास पर निरतंर ध्यान देने और उसके आधुनिकीकरण से असंदिग्ध रूप से मध्यावधि में पूंजी प्रवाहों की चुनौती कम हो जाएगी । किंतु, यह देखना महत्वपूर्ण है कि वित्तीय बाजारों को परिपक्व होने में समय लगता है । इसलिए, वित्तीय बाजारों के विकास का कार्य जारी रखते हुए कभी-कभी अल्पावधि में पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन अन्य लिखतों के माध्यम से करना होता है ।

अर्थव्यवस्था की अवशोषक क्षमता में वृद्धि बड़े अंतर्वाहों के संदर्भ में शमनकारी कारक हो सकता है । किंतु, किसी अर्थव्यवस्था की अवशोषक क्षमता का कम

समय में विकास आसान नहीं होता और यदि पूंजी प्रवाह अस्थिर हों तो उनसे किसी अर्थव्यवस्था की अवशोषक क्षमता को मिलाना बहुत कठिन होता है । इसके अलावा, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के संबंध में चालू खाते के घाटे का स्तर, जो कि सामान्यत: वैश्विक वित्तीय बाजारों द्वारा स्थायी स्वरूप का माना जाता है, इन अर्थव्यवस्थाओं में पूंजी अंतर्वाहों की पूरी मात्रा से कम हो सकता है ।

अनेक बार यह कहा जाता है कि बहिर्वाहों को प्रोत्साहन देना बढ़ते अंतर्वाहों के प्रबंधन का अच्छा मार्ग हो सकता है । इस दृष्टिकोण में कुछ गुण हैं, किंतु अंतर्वाहों का उदारीकरण अल्पावधि में कुछ विशेष उपयोगी नहीं होगा क्योंकि अधिक उदार व्यवस्था में सामान्यत: अधिक अंतर्वाह आकर्षित होते हैं । अत:, ऐसी नीति को अन्य उपायों से जोड़ना होगा जो प्रवाहों का प्रभावी ढंग से प्रबंधन कर सके ।

पूंजी खाते के उदारीकरण की व्यवस्था लागू करने में, अन्य क्षेत्रों के विकास के साथ सहबद्ध, ऐसे अनेक मामले हैं जिन पर अल्पावधि में पूंजी प्रवाहों के प्रबंधन के संबंध में ध्यान दिया जाता है । वे इस प्रकार हैं (क) क्या पूंजी प्रवाहों को बहुत बड़ा माना जाता है ; (ख) क्या उनका आकलन अस्थायी आधार पर किया जाता है ; (ग) यदि विनिमय दर की गतिविधि एक दिशावाली है तो हस्तक्षेप के प्रभाव की सीमाएं ; (घ) लागत और उपलब्ध साधनों को ध्यान में लेते हुए निष्प्रभावीकरण की वांछित सीमा; और (ङ) उक्त के अलावा, विनिमय दर अपेक्षाओं पर क्रियाविधिक उपायों और सुसंगत नीतिगत रुझान के संभाव्य प्रभाव । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि मौद्रिक और विनिमय दर तथा आरक्षित निधि का प्रबंधन सुपरिचित 'त्रिविधा' (trilemma) और विशेष रूप से मौजूदा वैश्विक स्थिति में जटिल बन गया है ।

मौद्रिक नीति

मौद्रिक नीति के अनुसार वैश्विक कारकों का महत्व बढ़ता जा रहा है, किंतु देशी गतिविधियों की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है । असंदिग्ध रूप से, वर्तमान ढांचागत बदलाव और वित्तीय क्षेत्र में सार्वजनिक क्षेत्र के महत्व की निरंतरता और साथ ही प्रशासित ब्याज दरों की उल्लेखनीय मौजूदगी कार्य को विशेष रूप से जटिल बना देती है । एक ओर, रिज़र्व बैंक का दोहरा अधिदेश रहा है, वहीं हाल के वर्षों में हेडलाइन मुद्रास्फीति पर इसने स्वयं पर सफलतापूर्वक पांच प्रतिशत की सहन-सीमा लगाई है । मौद्रिक नीति कड़ी करने की शुरुआत अक्तूबर 2004 में हुई और मार्च 2007 तक की अवधि के दौरान संभाव्य ओवरहीटिंग के शुरुआती चिह्नों पर कार्रवाईस्वरूप रिपो दरों में 0.25 प्रतिशत की सात बार वृद्धि की गई । पूंजी प्रवाहों में तेजी के चलते अतिरिक्त चलनिधि की चुनौती का सामना करने के लिए बैंकिंग प्रणाली संबंधी नकदी आरक्षित निधि अनुपात सितंबर 2004 से अब तक दस किस्तों में बढ़ाया गया जो कुल तीन सौ आधार अंक था । इस समय, वैश्विक खाद्य और ऊर्जा मूल्यों और साथ ही वित्तीय बाजार की अस्थिरता से भारी नीतिगत संभ्रम उत्पन्न हो रहे हैं जिन पर उभरते नीतिगत उचित प्रतिसादों में ध्यान देने की आवश्यकता है ।

बैंकों का पर्यवेक्षण

हाल के वर्षों में, अर्थव्यवस्था का उछाल आंशिक रूप से दर्शाते हुए ऋण वृद्धि अत्यधिक रही है, विशेष रूप से चुनिंदा घटकों में, और आस्ति मूल्य बढ़ रहे हैं ।

रिज़र्व बैंक ने यह स्पष्ट किया कि यद्यपि वह बाजार मूल्यांकन पर नजर नहीं रखता, फिर भी वह तेज मूल्य वृद्धि के संभाव्य जोखिम के प्रति बैंकिंग प्रणाली को संवेदनशील बनाना चाहेगा । इन मामलों पर ध्यान देने लिए दिसंबर 2004 से की गई कार्रवाई में आवास ऋणों और संवेदनशील क्षेत्रों, यथा-वाणिज्यिक स्थावर संपदा और पूंजी बाजार जोखिम के संबंध में जोखिम भार बढ़ाना शामिल है। इसके अलावा, नवंबर 2005 से मानक अग्रिमों, कृषि और लघु तथा मझौले उद्यम छोड़कर, हेतु प्रावधानीकरण अपेक्षा बढ़ा दी गई थी और संवेदनशील क्षेत्रों के संबंध में यह वृद्धि अधिक थी । चुनिंदा बैंकों पर अनेक क्रियाविधिक और प्रत्ययकारी उपाय और पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रियाएं की गईं ताकि इस संबंध में उन्हें संवेदनशील बनाया जा सके । विशेष रूप से, ऋण वृद्धि के चरण में ऋण की गुणवत्ता, उनकी आस्तियों के निधीयन के प्रति गैर जमाराशि स्रोतों का सहारा लेने, मूल्य के प्रति ऋण के चिंताजनक अनुपात और थोक जमाराशियों पर अत्यधिक निर्भरता ऐसे मामले थे जिनके संबंध में भारतीय रिज़र्व बैंक ने बार-बार चिंता जताई और इन मामलों पर अनुवर्ती कार्रवाई के रूप में आवश्यतानुसार चुनिंदा बैंकों के साथ चर्चा की गई । परिणामस्वरूप, समग्र ऋण वृद्धि और साथ ही संवेदनशील क्षेत्रों के अग्रिमों में अब कमी आई है । रिज़र्व बैंक बैंकों से अनुरोध कर रहा है कि वे उनके कंपनी ग्राहकों के आरक्षित बड़े विदेशी मुद्रा जोखिमों की सावधानी से निगरानी करें ।

इस बात को देखते हुए कि कुछ बैंक निधि जुटाने के कार्यों के संबंध में गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को माध्यम के रूप में उपयोग में लाते हैं जिससे विनियामक विवाचन और असुविधा का सामना करना पड़ता है, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों निवेश जोखिमों पर सीमाएं लगाई गईं और बैंकों के साथ उनके संबंध में पारदर्शिता पर बल दिया गया । इसके अलावा, पर्यवेक्षी स्थिति अच्छी रखने की दृष्टि से उन कुछ बैंकों के संदर्भ में पर्यवेक्षी समीक्षा की प्रक्रिया की गई जिनका तुलनपत्रेतर एक्सपोजर तेजी से बढ़ गया था ।

जटिल वित्तीय उत्पादों के संदर्भ में, ढांचागत ऋण बाजार अपनी प्रारंभिक स्थिति में है । बंधक-आधारित और आस्ति-आधारित दोनों प्रकार की प्रतिभूतियां चलन में हैं किंतु बाजार प्रथाओं में अंतर को देखते हुए और ऐसे उत्पादों के लेखांकन, आकलन तथा पूंजी पर्याप्तता व्यवहार संबंधी चिंताओं को ध्यान में रखते हुए रिज़र्व बैंक ने मानक आस्तियों के प्रतिभूतिकरण पर फरवरी 2006 में दिशानिर्देश जारी किए । भारत में क्रेडिट डेरिवेटिव, करेंसी फ्यूचर्स और साथ ही ब्याज दर फ्यूचर्स संशोधित उत्पाद स्वरूप में शुरू करने पर सक्रियता से विचार किया जा रहा है और बाजार सहभागियों के साथ विस्तृत परामर्श की प्रक्रिया जारी है ।

चलनिधि पर विनियामक ध्यान

प्रणाली की समग्र चलनिधि का प्रबंधन रिज़र्व बैंक विभिन्न साधनों के माध्यम से निष्प्रभावीकरण के अतिरिक्त दैनिक आधार पर चलनिधि समायोजन सुविधा के परिचालन के माध्यम से करता है ।

रिज़र्व बैंक ने बैंकों द्वारा आस्ति देयता प्रबंधन के विवेकसम्मत दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं और बैंकों को अल्पावधि हेतु निर्धारित असंतुलनों पर विनियामक सीमाओं की शर्त पर बोर्ड अनुमोदित नीति के अनुसार

अपनी स्वयं की जोखिम प्रबंधन कार्यनीति बनाने की छूट है; फिर भी रिज़र्व बैंक ने प्रणाली स्तर के जोखिम को कम करने के लिए भी कदम उठाए हैं ।

रिज़र्व बैंक ने सभी वर्गों की संस्थाओं को बेजमानती एक दिवसीय बाजार निधियों तक पहुंच की अनुमति के जोखिम को पहले ही पहचान लिया था और इसीलिए एक दिवसीय बेजमानती बाजार निधियों तक पहुंच बैंकों और प्राथमिक व्यापारियों तक सीमित रखी थी ।

अन्य पर्यवेक्षकों जैसे ही, रिज़र्व बैंक ने भी समग्र आस्ति-देयता असंतुलनों पर कार्रवाई के लिए आस्ति-देयता प्रबंधन दिशानिर्देश जारी किए हैं । बैंकों द्वारा मांग मुद्रा उधारों पर अत्यधिक निर्भरता से प्रणालीगत समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं, इसलिए निवल मालियत के संदर्भ में अंतर-बैंक देयताओं के अलावा मांग मुद्रा बाजार में उधार देने और लेने दोनों पर विवेकसम्मत सीमाएं लगाई गई हैं।

मानक आस्तियों के प्रतिभूतिकरण पर दिशानिर्देशों में विशेष प्रयोजनीय माध्यम (एसपीवी) को चलनिधि सहायता के प्रावधान पर विस्तृत विनियमन लागू हुए हैं। इससे अन्य बातों के अलावा, निहित आस्तियों से नकदी प्रवाह प्राप्ति तथा निवेशकों को किए जानेवाले भुगतान के बीच एसपीवी द्वारा सामना किए जा रहे समय-अंतर को ठीक करने में मूल या तीसरे पक्षकार द्वारा चलनिधि की सुविधा प्रदान करने में सहायता मिली है । चलनिधि सुविधा के संदर्भ में कुछ शर्तें हैं जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि चलनिधि सहायता अस्थायी स्वरूप की है तथा उसका उपयोग नकदी प्रवाहों के असंतुलन दूर करने और हानियों को पूरा करने के लिए ही किया जाता है । ऐसी चलनिधि सुविधा उपलब्ध कराने की किसी भी प्रतिबद्धता को तुलनपत्रेतर मद माना जाता है तथा उस पर 100 प्रतिशत ऋण रूपांतरण कारक के साथ ही 100 प्रतिशत जोखिम भार लागू होता है ।

चुनिंदा मामले

भारतीय अनुभव और हाल की वैश्विक गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए मैं कुछ चुनिंदा मामले विचारार्थ सामने रखना चाहूंगा । पहला, तार्किक रूप से वैश्वीकरण ने स्फीतिकारी दबावों को कम करने में मदद की है । एक दिलचस्प मामला यह हो सकता है कि क्या व्यापार के वैश्वीकरण ने वित्त के वैश्वीकरण की तुलना में ऐसी प्रक्रिया में अधिक योगदान किया है या यह एक संयुक्त प्रभाव है । चीन का विनिर्माण उद्योग और किसी सीमा तक भारतीय सेवा क्षेत्र ने स्वीकारात्मक रूप से अधोगामी स्फीतिकारी दबावों में योगदान किया है जबकि खाद्य और ईंधन के मूल्यों पर हाल के ऊर्ध्वमुखी दबाव व्यापार से संबंधित वित्त की भूमिका की महत्ता नहीं सुझाते। तेल और खाद्य के मूल्यों पर पण्य व्यापार संबंधी डेरिवेटिव साधनों के अत्यधिक उपयोग का प्रभाव अभी अनिर्णायक है ।

इसके अलावा, चीन और शायद भारत द्वारा भी दर्शाए अनुसार, वैश्विक समन्वयन के परिणामस्वरूप अब तक मूल्य कम करने के मुख्य योगदानकर्ता तुलनात्मक रूप से पूंजी खाते के संबंध में कम खुले रहे हैं और उनका वित्तीय क्षेत्र कम समन्वित है ।

दूसरा, खुले पूंजी खाते और वृद्धि निष्पादन के बीच के संबंध की पुष्टि दो सर्वाधिक बड़े उभरते बाजारों के अनुभव से नहीं हुई है, यद्यपि ऐसे संबंध को पूर्णत: नकारा भी नहीं गया है । अब तक के सीमित अनुभव के मद्देनजर, व्यापार समन्वय की तुलना में आस्ति मूल्यों में गतिविधि और वित्तीय समन्वय के बीच संबंध की

खोज करना भी उपयोगी है । किसी भी स्थिति में यह विचार भारी पूंजी अंतर्वाहों वाले उक्त दो उदाहरणों से अब तक पूर्णत: सिद्ध नहीं हुआ है कि प्रबंधित पूंजी खाता वित्तीय बाजार में विपरीत रुख लाता है । यह पूंजी खाता खुलेपन की तुलना में समष्टि आर्थिक मूलतत्वों पर अधिक भार देने की आवश्यकता की ओर संकेत करता है ।

तीसरा, वित्तीय बाजारों / संस्थाओं में हाल में हुई हलचल और सार्वजनिक नीति के सुव्यवस्थित और समन्वित प्रतिसाद का महत्व प्रतिचक्रीय राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के महत्व को इंगित करता है । क्या यह तर्क देना संभव है कि मौद्रिक नीति और विवेकसम्मत नीतियों के बीच भी ऐसी ही सुव्यवस्था का प्रतिचक्रीय उपायों के भाग के रूप में कुछ महत्व होगा ?

चौथा, बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण के संदर्भ में यह देखना उपयोगी है कि क्या वित्तीय प्रणाली में बैंकों की विशिष्ट स्थिति और विनियामकों / पर्यवेक्षकों के बीच सक्रिय समन्वय की आवश्यकता की पुन:पुष्टि आवश्यक है । इसके अलावा, अधिकांश समाजों के जनसामान्य ऐसी संस्थाएं चाहेंगे जहां निधियां पूर्णत: सुरक्षित होने की संभावना हो और ऐसी पारंपरिक संस्थाएं बैंक हैं । अत:, यदि बैंकों के संबंध में सार्वजनिक नीतियों में उचित अपेक्षा की धारणा स्वीकार की जाती है (नार्दन रॉक के अनुभव में देखे अनुसार), तो जमाकर्ताओं के हित की प्रमुखता स्पष्टत: उजागर होती है । इस स्थिति में, बैंकों के संदर्भ में 'वितरण हेतु उत्पन्न' मॉडल के पुनराकलन, तुलनपत्रेतर मदों और बैंकों की चलनिधि अपेक्षाओं की सूक्ष्म जांच आवश्यक हो जाती है । इसके अलावा,वित्तीय नवोन्मेष और विनियमन पर ऐसे नवोन्मेष की संभाव्य और प्रणालीगत सुसंगतता उन्हें विनियामक परिधि में प्रभावी ढंग से लाने के लिए क्षमता के संदर्भ में चर्चा पर विचार किया जाना है । बैंकिंग कारोबार के व्यवहार में पहले की तुलना में प्रतिष्ठागत जोखिम की सुसंगतता की सीमा भी विचारणीय है।

पांचवां, माल-व्यापार की तुलना में वित्तीय क्षेत्र और विशेष रूप से बैंकिंग क्षेत्र के संबंध में बाह्यता अधिक विद्यमान है । अत:, कुछ विनियमन आवश्यक है और यह राष्ट्रीय होना चाहिए । तथापि, आधुनिक प्रौद्योगिकी के कारण वित्तीय प्रवाह तेज हैं और उल्लेखनीय हो सकते हैं, किंतु वैश्विक पैमाने के आधार पर वित्तीय प्रवाहों के संबंध में उत्पत्ति के नियमों को पहचानना या लागू करना अत्यंत कठिन हो जाता है । इस संबंध में, युक्तियुक्त और लागू करने योग्य तरीके से बैंकिंग विनियमों को वैश्विक तौर पर सुसंगत करने की गुंजाइश और सीमा का निरंतर आकलन करना होगा ताकि राष्ट्रीय विनियामक अपने विनियामक क्षेत्र में आवश्यक वैश्विक अपेक्षाएं और जन सामान्य की उचित अपेक्षाओं की देशी अनिवार्यता तैयार कर सकें जिनसे सार्वजनिक नीति विनियमित होती है ।

छठा, वर्तमान में मौद्रिक नीति संचलन में अनेक पहलुओं से चुनौतियां आ रही हैं जो हाल की वित्तीय हलचल से उत्पन्न हुई हैं । इनका संबंध मुख्य अर्थव्यवस्थाओं के मौद्रिक नीतिगत उपायों में आकस्मिक और व्यापक परिवर्तन, अल्पावधि में विनिमय दर में प्रमुख सुसंगतीकरण और खाद्य तथा ऊर्जा मूल्यों से उत्पन्न अपूर्व स्फीतिकारी दबावों से है । इस संबंध में केंद्रीय बैंकरों के बीच सहयोग के महत्वपूर्ण और नवोन्मेषी मार्ग बनना आवश्यक हो जाता है।

अंत में, एक विशुद्ध शैक्षिक दृष्टि से, सरकारों और वित्तीय क्षेत्र के बीच चर्चा के संदर्भ में राजनैतिक आर्थिक विचारों सहित अंतरराष्ट्रीय नीति समन्वय संबंधी

मुद्दों की खोज सुसंगत होगी जो न केवल वित्त के बढ़ते महत्व बल्कि वित्तीय प्रवाहों में सीमापारीय संबंधों से भी प्रभावित होगी । नार्दर्न रॉक, सॉवरिन वेल्थ फंड और वित्तीय नवोन्मेष पर हाल की चर्चा, जो विनियमन से आगे है, इस व्यापक मुद्दे का सूचक है । मुझे यह स्मरण हो रहा है कि अन्य के साथ-साथ प्रो. मॅककिन्नन और प्रो. जगदीश भगवती ने कुछ वर्ष पूर्व इनमें से कुछ पहलुओं की ओर संकेत किया था ।